Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
Available online at : www.shisrrj.com
OPEN ACCESS
© 2024 SHISRRJ | Volume 7 | Issue 3
ISSN : 2581-6306
doi : https://doi.org/10.32628/SHISRRJ

1857 की क्रान्ति : बहादुरशाह जफर

डॉ0 शहरयार
पूर्व शोध छात्र, इतिहास विभाग, शिब्ली नेशनल कालेज, आज़मगढ़,उत्तर प्रदेश।

Article Info

Article History
Received : 03 May 2024
Published : 15 May 2024
Publication Issue :
May-June-2024
Volume 7, Issue 3
Page Number : 123-125

शोधसारांश– बहादुरशाह ज़फर चलाये गये ऐतहासिक मुकदमें के लिए अदालत लाल किले में ही गठित की गई, उसी दीवाने खास में जहां कभी ज़फर के पुरखे और बाद में खुद ज़फर भी, बैठ कर हिन्दुस्तान के बारे में फैसले लिया करते थे। आधुनिक भारत के इतिहास में बहादुरशाह ज़फर का नाम एक लोकनायक के रुप में स्वर्णिम अक्षरों में लिखा जायेगा। बहादुरशाह का चिन्तन और चरित्र उनकी रचनाओं में भरपूर झलकता है

मुख्य शब्द– तैमूर वंशीय, बहादुरशाह ज़फर, साहित्य, शायरी, क्रान्ति, लोकनायक, चिन्तन और चरित्र।

तैमूर वंशीय योद्धाओं की गौरवशाली परम्परा के संवाहक बाबर के वंशजों ने भारत में मुगल वंश के साम्राज्य की नींव 1526 में ड़ाला था। भारत में विशाल साम्राज्य की स्थापना कर साम्प्रदायिक संक्रीर्णता से मुक्त अकबर ने दीन–ए–इलाही का प्रवर्तन किया था। उसकी लोक कल्याणकारी नीतियों ने साम्राज्य भर में सुख, शान्ति, सृजन, और शासन व्यवस्था को चरम उत्कर्ष पर पहुंचाया था। 18वीं और 20वीं शताब्दी में पूर्वी गोलार्ध में मुगल साम्राज्य की राजधानी दिल्ली का अत्यन्त महत्व था। मुगल सम्राटों में अन्तिम मुगल बादशाह बहादुरशाह जफर की सत्ता शाहजहांनाबाद तक सीमित रह गई। चारित्रिक रुप से बहादुरशाह ज़फर एक सुकवि, विद्ववान, धर्मपरायण, कुशल, राजनीतिविद् और लोकप्रिय शासक था। जिनका जन्म 24 अक्टूबर 1775 में दिल्ली में हुआ था। जन्म के बाद उनका नाम अबू जफर सिराजुद्दीन मुहम्मद बहादुरशाह ज़फर रखा गया। लेकिन वे बहादुरशाह जफर के रुप में अधिक लोकप्रिय थे। उनके पिता अकबर द्वितीय थे और उनकी माता लालबाई थी। 1837 में अपने पिता अकबर द्वितीय की मृत्यु के बाद अन्तिम मुग़ल बादशाह के रुप में दिल्ली की गद्दी पर बैठे। वह बिना साम्राज्य के सम्राट थे।

बहादुरशाह ज़फर साहित्य एवं शायरी में अत्याधिक रूचि थी। इब्राहिम ज़ौक़, उनकी कविता के शिक्षक थे।[1] हसन अस्करी उनके आध्यात्मिक गुरू थे। वे स्वमं 'ज़फर' उपनाम से शायरी करते थे। उनके द्वारा रचित अधिकांश उर्दू गज़लें 1857 के युद्ध के दौरान खो गई। उनमें से जो बची थी उन्हें संकलित किया और 'कुल्लियात–ए–ज़फर' नाम दिया गया।

डलहौजी जैसे कम्पनी सरकार के छल प्रपंच करने वाले कूटनीतिज्ञों की चालों ने मुगल साम्राज्य को छिन्न–भिन्न कर उसे एक लाख रुपये प्रतिमास का वेतनभोगी बना दिया था। कम्पनी सरकार के कारकूनों द्वारा भारतीय जनता के शोषण दमन के प्रति बादशाह ज़फर में भयानक आक्रोश और घृणा थी।

बहादुरशाह ज़फर की अंग्रेजों के प्रति घृणा की एक वजह ये भी थी कि सम्राट की पत्नि ज़ीनत महल से जन्मे उनके अल्पवयस्क पुत्र जवां बख्त को अपना उत्तराधिकारी बनाना चाहते थे।[2] लेकिन अंग्रेज बादशाहत के इस सिलसिले को खत्म कर देना चाहते थे क्योंकि बादशाहत की उपस्थिति में ब्रिटिश सरकार का दर्जा एक राज्य का मालूम होता था।[3]

परन्तु 1856 के आरम्भ में ही जब कम्पनी की सत्ता को उखाड़ फेंकने की सुगबुगाहट मिली उनका जोश उमंगे भरने लगा। उसने अपने पोते मिर्जा बेदार बख्श को पयाम–ए–आजदी के सम्पादन के लिए आदेशित किया।[4] ताकि जनता की

Copyright © 2024 The Author(s): This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution **4.0 International License (CC BY-NC 4.0)**

चेतना को क्रान्ति के लिए जागृत किया जा सके। पयाम–ए–आजादी का प्रकाशन फरवरी 1857 में शुरु हुआ था। इसके विशेष संस्थापक अज़ीमुल्लाह खां थे जो 1857 की क्रान्ति के वरिष्ठ नेता और सिपहसालार थे।[5]

1857 के विद्रोह के विस्फोट से पूर्व बहादुरशाह ज़फर ने भारतीय जनता को सम्बोधित करते हुए कहा था–

''हिन्दुस्तान के हिन्दुओं और मुसलमानों! उठो। बेदार (जागो) हो जाओ। खुदा ने कितनी बरकते इन्सान को दी है, उनमें सबसे कीमती आज़ादी है। जिस ज़ालिम ताकत (अंग्रेज) ने धोखा देकर गद्दारी करके हमसे ये बरकत छीन ली है, क्या हमेशा के लिए महरुम (वंचित) रख सकेगी? क्या खुदा की मर्जी के खिलाफ जुल्म व सितम का यह सिलसिला हमेशा जारी रह सकता है? नही! हरगिज़ नही! फिरंगियों ने इतने जुल्म किये है कि उनके का पैमाना लबरेज़ (भर) हो चुका है। यहां तक हमारे पाक मज़हब व धर्म को खराब करने का नापाक इरादा भी अंग्रेजों के दिल में पैदा हो गया है। क्या अब भी खामोश बैठो रहोगे? खुदा यह हरगिज़ नही चाहता है कि जुम खामोश रहो क्योंकि उसने हिन्दुओं और मुसलमानों के दिल में अंग्रेजों को अपने मुल्क से बाहर निकाल देने की हिम्मत पैदा कर दी है। खुदा के फज़्ल (कृपा) और तुम्हारी हिम्मत और बहादुरी से हमारे मुल्क हिन्दुस्तान में अंग्रेजों का नाम और निशान बाकी रह पायेगा। हमारी फौज के छोटे और बड़े का भेदभाव नही है। सब के साथ समान बर्ताव होगा। इस जंग में दीन व मज़हब और धर्म के लिए जो भी लडेगा बराबर के सबाब (पुण्य) का हिस्सेदार होगा।''[6]

बैरकपुर की घटना के परिणामस्वरुप '10 मई 1857 को मेरठ के सिपाहियों ने विद्रोह कर दिया[7] 11 मई 1857 की सुबह मेरठ से कूच करने वाले विद्रोही सिपाहियों ने दिल्ली के लिए नाव के पुल द्वारा यमुना को पार किया।[8] दिल्ली के लाल किले में प्रवेश कर 11 मई को बूढे मुगल बादशाह बहादुरशाह ज़फर को हिन्दुस्तान का बादशाह घोषित किया।[9] बादशाह को सिंहासनासरूढ करने के पश्चात विद्रोही उनके निर्देशन में बगावत की कार्यवाही को अन्जाम देने का संकल्प लिया।

बहादुरशाह ज़फर के नये दरबारियों में बख्त खां (1797–1859) थे जिनके निर्देशन में राजाओं, नवाबों, जागीरदारों के पास बगावत में समर्थन के लिए पत्र भेजे गये तथा फौजी टुकडियों को निर्देशन भेजे गये। इस नयी व्यवस्था ने देश के बड़े हिस्सों में आशातीत सफलता दी। जल्द ही यह विद्रोह पश्चिमोत्तर प्रान्त और अवध के क्षेत्रों में फैल गया। हताश गवर्नर जनरल लार्ड कैनिंग 19 जून को लिखा 'रुहेलखण्ड और दोआबे में दिल्ली से कानपुर इलाहाबाद तक देश न केवल हमारे विरूद्ध बगावत कर बैठा है बल्कि एक सिरे से विधि विरूद्ध हो चुका है।'[10]

परन्तु देश के गद्दारों और विश्वासघातियों के कारण विद्रोही फौज में फूट पड़ गयी फलतः विद्रोह अपने लक्ष्य तक नही पहुंच सका। अंग्रेजों ने 20 सितम्बर 1857 में दिल्ली पर पुनः कब्ज़ा कर लिया और आज़ादी के मंसूबों पर पानी फेर दिया।

बहादुरशाह ज़फर को 21 सितम्बर को झूठा आश्वासन देकर हुमायूं के मकबरे में गिरफ्तार कर लिया गया। मेजर हडसन ने ज़फर के सामने उसके बेटे मिर्जा मुगल व मिर्जा खिज्र तथा पोते अबु बक्र के कटे सिरों को थाल में रखकर पेश किया और कहा गया कि यह है तुम्हारी पेंशन। तब ज़फर ने धैर्यपूर्वक उत्तर दिया ''अलहमदोलिल्लाह! तैमूर की औलादे ऐसे ही सुर्खुरू हो कर अपने बाप के सामने आया करती थी''[11]

गिरफ्तार बादशाह पर कम्पनी सरकार में मुकदमा चलाने का फैसला किया, लेफ्टिनेण्ट कर्नल एमडॉस की अध्यक्षयता में एक कमीशन गठित किया गया।[12] मुकदमें की कार्यवाही बुधवार 21 जनवरी 1858 से मंगलवार 9 मार्च 1858 तक कुल 21 दिन चली थी।[13]

ये काल चक्र की विडम्बना ही कही जायेगी कि बहादुरशाह ज़फर चलाये गये ऐतहासिक मुकदमें के लिए अदालत लाल किले में ही गठित की गई, उसी दीवाने खास में जहां कभी ज़फर के पुरखे और बाद में खुद ज़फर भी, बैठ कर हिन्दुस्तान के बारे में फैसले लिया करते थे उन्हें एक अभियुक्त के बतौर पेश होना पड़ा।[14]

आधुनिक भारत के इतिहास में बहादुरशाह ज़फर का नाम एक लोकनायक के रुप में स्वर्णिम अक्षरों में लिखा जायेगा। बहादुरशाह का चिन्तन और चरित्र उनकी रचनाओं में भरपूर झलकता है। मानव जीवन की परिवर्तनशील विडम्बना पर उनके अन्तिम शब्द करारी चोट करते है–:

है कितना बद्नसीब ज़फर दफ्न के लिए
दो गज़ ज़मी न मिली कोये यार में।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. मुरादाबादी मासूमः 1857 की क्रान्ति और उर्दू पत्रकारिता, फेरोस मीड़िया एण्ड पब्लिसिंग प्रा0 लि0 दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2019 पृ0 114।
2. वहीं पृ0 44।
3. वहीं पृ0 44।
4. वहीं पृ0 145।
5. सिंह फूलबदनः आज़मगढ़ का स्वाधीनता संग्राम खण्ड एक, जिला स्वाधीनता संग्राम सैनिक संघ, आज़मगढ़, 1974 पृ0 85।
6. वहीं पृ0 119।
7. बंद्योपाध्याय शेखरः प्लासी से विभाजन तक और उसके बाद, ओरियन्टल ब्लैकस्वॉन प्राइवेट लिमिटेड, हैदराबाद (तेलंगाना) 2019 पृ0 170।
8. मुरादाबादी मासूमः 1857 की क्रान्ति और उर्दू पत्रकारिता, फेरोस मीड़िया एण्ड पब्लिसिंग प्रा0 लि0 दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2019 पृ0 45।
9. बंद्योपाध्याय शेखरः प्लासी से विभाजन तक और उसके बाद, ओरियन्टल ब्लैकस्वॉन प्राइवेट लिमिटेड, हैदराबाद (तेलंगाना) 2019 पृ0 170।
10. वहीं 170।
11. खान मो0 खालिदः जंगे आजादी और मुसलमान, फिरोस मीडिया एण्ड पब्लिसिंग प्रा0 लि0 दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2019 पृ0 57।
12. निज़ामी ख्वाजा हसनः बहादुरशाह का मुकदमा, वाणी प्रकाशन, स्वर्ण जयंती दिल्ली, 2009 पृ0 8।
13. वहीं पृ0 8।
14. वहीं 8।